International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
July-August 2019, Volume-6, Issue-4
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org
Email- editor@ijesrr.org

भारत में मानव अधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन के प्रयासो में चुनौतियों का अध्ययन

डॉ. मेहराज जहाँ,
एसिस्टेंट प्रोफेसर, विधि विभाग,
बी0 एस0 एम0 डिग्री कॉलिज, रूड़की

सार–

मानवाधिकार का उदय, विचार के रूप में एक लंबी प्रक्रिया की उपज है। यह एक ऐसा विचार है जिसमें बदलती हुई सामाजिक परिस्थितियों और समय के साथ विभिन्न प्रकार के परिवर्तन हुए है। मानवाधिकार सामान्यता, वे अधिकार हैं जो मानव होने के नाते, प्रत्येक मानव को बिना किसी भेदभाव के जन्म के साथ ही प्राप्त होते हैं। भारत में मानव अधिकार आजादी के बाद की यात्रा समय बीतने तथा नये विकास के साथ भारत में अधिकारों की अवधारणा की समीक्षा की गई, जैसे अच्छे स्वास्थ्य का अधिकार, भोजन का अधिकार, शिक्षा का अधिकार, पानी का अधिकार, सूचना का अधिकार आदि। भारतीय समाज में मानवाधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन के प्रयासों में कई चुनौतियाँ आई है। जैसे पुलिस प्रशासन के संबंध में, झूठे मामले में फंसाना, गैर–कानूनी गिरफ्तारी, हिरासत में मौत, मुठभेड़ में मौत आदि। इस शोध पत्र में ऐतिहासिक, वर्णनात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है। भारतीय समाज में मानवाधिकारों का सर्वाधिक हनन निर्धन गरीब व्यक्तियों या नारियों के संदर्भ में होता है। पुलिस विभाग को भी मानवाधिकारों के हनन में सर्वाधिक दोषी पाया जाता है। बाल श्रमिकों का नियोजन, बंधुआ मजदूरी की प्रथा, आदिवासियों का शोषण, बड़े बांध, जलाशयों, विद्युत परियोजनाओं के निर्माण में बड़ी संख्या में स्थानीय निवासियों का विस्थापन आदि मानवाधिकारों का खुला उल्लंघन हैं। मानव अधिकार मनुष्य के विकास के लिए अति आवश्यक है। जिसके बिना मनुष्य अपना सम्पूर्ण विकास नहीं कर सकता हैं।

प्रस्तावना–

स्वंतत्रता, आजादी के लिए लड़ी गई लंबी लड़ाई की एक उपलब्धि थी। इसने राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया शुरू करने के और भी अधिक बड़े संघर्ष को मार्ग प्रशस्त किया। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण था क्योंकि क्षेत्रीयता, प्रान्तीयता तथा सांप्रदायिकता जैसे कारक स्वतंत्र भारत के लिए चुनौती पेश करने हेतु मुंह बाए खड़े थे। इसलिए लोगों के अधिकारों की रक्षा राज्य के सर्वोच्च एवं मुख्य दायित्वों में से एक था जिसकी प्राप्ति को आजाद भारत के कानून निर्माताओं ने अपना लक्ष्य बनाया। मानवाधिकार का सृजन भी समाज में होता है। सामान्यतया मानवाधिकार से तात्पर्य है लिंग, धर्म, जाति, सम्प्रदाय, देश, आर्थिक स्थिति जैसे भेदभावमूलक विचारों को त्याग कर मानव को समुचित विकास, संरक्षण तथा ससम्मान जीवन जीने का वह अधिकार प्रदान करना जो उसे जन्म के साथ ही प्राप्त हो जाता है। हमारे संविधान में नीति निर्देशक सिद्धांतों तथा मौलिक अधिकारों को इसी भावना को ध्यान में रखते हुए स्थान दिया गया है। मानवाधिकार की अवधारणा का इतिहास बहुत पुराना है। इस अवधारणा का विकास सत्ता के निरंकुश उपयोग पर अंकुश लगाना है। मध्यकाल में 13वीं शताब्दी में राजा और सामंतों के मध्य हुआ समझौता जिसे 'मैग्नाकार्टा' कहा जाता है, ने मानवाधिकार

की पृष्ठभूमि तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इंग्लैण्ड में स्वतंत्रताओं के लिए हुआ यह समझौता 15 जून 1215 ई. को हुआ जिसे मैग्नाकार्टा या ग्रेट चार्टर कहा जाता है। ब्रिटेन में हुई क्रांति (1689 ई.) ने मानवाधिकार की अवधारणा को विस्तार दिया। इस क्रांति में 'बिल ऑफ राइट्स' के द्वारा व्यक्ति की उन मौलिक स्वतंत्रताओं को मान्यता दी गई जिनका अब तक हनन किया जाता रहा था। इसके बाद 1776 को अमेरिकी क्रांति, जिसमें अमेरिका, ब्रिटेन की गुलामी से मुक्त हुआ तथा 1789 की फ्रांस की क्रांति, जिसका मुख्य नारा था–स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व, ने आधुनिक मानवाधिकारों के विकसित होने के लिए आधार भूमि तैयार की।

वर्तमान मानवाधिकार सम्बन्धी गतिविधियां वास्तव में द्वितीय विश्व युद्ध का परिणाम हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान घटित अमानवीय घटनाओं की भर्त्सना करते हुए अमेरिका के राष्ट्रपति फ्रैंकलिन रूजवेल्ट (1882–1945) का भाषण (1940) जिसमें रूजवेल्ट ने मनुष्य की चार मूलभूत स्वतंत्रताओं का उल्लेख किया था, भविष्य में मानवाधिकार सम्बन्धी घोषणा का मुख्य आधार बना। फ्रेंकलिन की पत्नी एलीनोर रूजवेल्ट (1884–1962) की अध्यक्षता में 1946 में गठित मानवाधिकार आयोग द्वारा तैयार किए गए प्रारूप को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा स्वीकृत और घोषित किए जाने के साथ ही विश्व समुदाय द्वारा इसे न केवल मान्यता दी गई बल्कि अपने–अपने संविधानों में स्थान देकर विधिक स्वरूप भी प्रदान किया गया। 10 दिसम्बर 1948 को मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा की गई। यह भी एक संयोग है कि संयुक्त राष्ट्र में मानवाधिकारों पर चर्चा हो रही थी उसी समय भारत के संविधान का प्रणयन हो रहा था। हमारे संविधान निर्माता इस तथ्य से पूरी तरह वाकिफ थे और अपने देश के नागरिकों के लिए ऐसी ही व्यवस्था के लिए प्रयत्नशील थे। परिणामस्वरूप भारतीय संविधान में मानवाधिकारों को उच्च स्थान देते हुए उस मौलिक अधिकारों के खण्ड में न केवल स्थान दिया गया बल्कि इसकी रक्षा की जिम्मेदारी न्यायपालिका को सौंप कर इसे गारंटीकृत भी किया गया।

समय बीतने तथा नये विकास के साथ भारत में अधिकारों की अवधारणा की समीक्षा की गई तथा न्यायपालिका, राज्य एवं गैर राज्य कार्यकत्ताओं द्वारा इसकी नये ढंग से व्याख्या की गई। उदाहरणार्थ जीवन एवं स्वतंत्रता के अधिकार को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है तथा यह सर्वाधिक पवित्र एवं संजोया गया अधिकार है। वस्तुतः अनुभव तथा बढ़ती चिंताओं ने अधिकारों की नई पीढ़ियों को न्यायिक उद्घोषणाओं के जरिये मान्यता प्रदान की है। 1978 में मेनका गांधी मामले में निर्णय से पूर्व भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 को केवल कार्यपालिका के कार्य के विरूद्व एक गारंटी के रूप में समझा जाता था जिसे कानून द्वारा समर्थन नहीं प्राप्त था। किन्तु मेनका के मामले ने एक नया आयाम खोला तथा निर्धारित किया कि कानून बनाने पर भी एक सीमा लगाई जाए यथा किसी व्यक्ति को उसके जीवन अथवा व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित करने के लिए प्रक्रिया निर्दिष्ट करते समय इसे ऐसी प्रक्रिया निर्धारित करनी चाहिए जो युक्ति युक्त, निष्पक्ष एवं न्यायपूर्ण हो। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने विभिन्न फैसलों में यह कहा है कि अनुच्छेद 21 में दिये गये जीवन के अधिकार का अर्थ महज निर्वाह अथवा पाश्विक अस्तित्व नहीं है। अदालत ने अपने विभिन्न निर्णयों द्वारा जीवन के अधिकार के भाग के रूप में व्यापक अधिकारों का उल्लेख किया है। इनमें निम्नलिखित शामिल है।

- बंधुआ मजदूरी अथवा मजदूरी की अनुचित दशाओं के अधीन नहीं करने का किसी व्यक्ति का अधिकार।

- रिहाई के पश्चात् बंधुआ मजदूर के पुनर्वास का अधिकार।
- प्रत्येक रोगी को तत्काल चिकित्सा सहायता देकर इस बात की परवाह किये बिना कि वह निर्दोष है अथवा दोषी है।
- प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की रक्षा करने के लिए राज्य के ऊपर दायित्व।
- घायल व्यक्ति की जान बचाने के पश्चात् दंड कानून अपना काम करता है।
- जामित व्यक्ति की अदा करने की क्षमता तथा साधनों के भीतर उचित जीवन बीमा निगम का अधिकार।
- अच्छे स्वास्थ्य का अधिकार।
- स्वतंत्रतापूर्वक आवागमन करने तथा साथियों के साथ मिलने जुलने का अधिकार जिसका यदि सीबीआई को प्रथम दृष्टया मामले के बिना किसी अपराध की जांच का निर्देष दिया जाता है तो उल्लंघन होगा।
- भोजन का अधिकार।
- पानी का अधिकार।
- शिक्षा का अधिकार।
- किसी कैदी के ऊपर इसे लागू किये जाने पर इसमें जीवन की आवश्यकताओं यथा पर्याप्त पोषण, वस्त्र, आवास, पठन लेखन हेतु सुविधा, जेल के विनियमों के अनुसार उसके परिवार के सदस्यों तथा दोस्तों के साथ मिलने जैसे अधिकार शामिल है।
- प्रतिष्ठा का अधिकार।
- शालीनता तथा समुचित गरिमा के साथ महिलाओं से पेश आने का अधिकार।
- मुकदमों का शीघ्र विचारण का अधिकार।
- हथकड़ी लगाने के विरूद्व अधिकार।
- हिरासतीय हिंसा के विरूद्व अधिकार।
- कुपोषण से मुक्ति का अधिकार।
- सूचना का अधिकार।

इसलिए यह देखा जा सकता है कि न्यायिक सक्रियता एक ऐसे राष्ट्रीय माहौल का निर्माण करने में उत्प्रेरक रहा है जिसमें मानवीय अस्तित्व के विभिन्न पहलूओं को प्रोत्साहन मिला है जिससे कि उनका सम्मान हो सके तथा उन्हें आम आदमी के मानव अधिकारों का हिस्सा बनाया जा सकें। इसके अतिरिक्त संविधान के भाग 4 में राज्य नीति के निर्देशक तत्वों को निर्धारित किया गया है जो देश के शासन में मूलभूत हैं तथा राज्य का यह दायित्व होगा कि वह कानून बनाने में इन सिद्वांतों को लागू करें। अदालतों ने यह विचार व्यक्त किया है कि ये निर्देशक सिद्वांत एक कल्याणकारी राज्य की प्राप्ति में मौलिक अधिकारों को पूरा करते है। इन्हें अलग करके नहीं देखा जा सकता तथा ये एक–दूसरे के पूरक है।

चुनौतियाँः–

भारत का सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक ढांचा तथा इसके औपनिवेशिक अतीत के कारण भारत में मानव अधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन के प्रयासों में कई चुनौतियाँ आई है। भारत में मानव अधिकार उल्लंघन के अधिकांश मामलों को निम्नवत् रखा जा सकता है।

- पुलिस प्रशासन के संबंध में
- कार्यवाही करने में असफलता
- गैर कानूनी निरोध
- झूठे मामले में फंसाना
- हिरासतीय हिंसा
- गैर कानूनी गिरफ्तारी
- अन्य पुलिस ज्यादती
- हिरासत में मौत
- मुठभेड़ में मौत
- कैदियों का उत्पीड़न, कैदियों की स्थिति
- अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों पर अत्याचार
- बंधुआ मजदूरी, बाल मजदूरी
- बाल विवाह
- साम्प्रदायिक हिंसा
- दहेज हत्या अथवा इसका प्रयास, दहेज की मांग
- अपहरण, बलात्कार तथा हत्या
- महिलाओं का यौन शोषण तथा अपमान
- महिलाओं का शोषण
- अशक्त व्यक्तियों के प्रति भेदभाव
- एच आई वी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों के प्रति भेदभाव
- यौन कामगारों के प्रति भेदभाव आदि

ऊपर दी गई जानकारी व्यापक नहीं है बल्कि उदाहरण मात्र है। यद्यपि मानव अधिकारों के उल्लंघन के प्रति बढ़ती चिंता के कारण मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 बना जिसमें राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, राज्यों में राज्य मानव अधिकार आयोग तथा मानव अधिकारों की रक्षा के लिए मानव अधिकार न्यायालय के गठन का उपलबंध किया गया। इस प्रकार 12 अक्टूबर, 1993 को राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग अस्तित्व में आया।

भारत में मानवाधिकार

मध्य युग के छोटे कालखण्ड को छोड़कर देखे तो भारत में मानवाधिकार की संस्कृति बहुत पुरानी है। प्राचीन साहित्य चाहे वह वैदिक साहित्य हो या संस्कृत, पालि अथवा प्राकृत साहित्य सभी में मानवाधिकारों को आवश्यक तत्व के रूप में शामिल किया गया है। यही नहीं इस प्राचीन कालीन साहित्य में सहअस्तित्व की भावना तीव्ररूप में हर क्षेत्र में दिखाई देती है। चाहे वह वन्यजीवों के सम्बन्ध में हो या प्रकृति में पाई जाने वाली वनस्पतियों, पेड़–पौधों आदि के सम्बन्ध में हो।

हमारे देश में प्रत्येक युग में मानवाधिकर के महत्व को स्वीकार किया गया है। महात्मा बुध ने ''बहुजन हिताय बहुजन सुखाय'' का सन्देश दिया था। सूर, कबीर, तुलसी, रैदास आदि ने भी अपनी रचनाओं से मानव अधिकारों के महत्व को समाज के सामने रखा। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने 20वीं सदी में मानवाधिकारों के लिए अपने संघर्ष में अपना जीवन अर्पित कर दिया। उन्होंने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, अस्मिता, समानता और मानवीय मूल्यों के लिए संघर्ष किया। डॉ. अम्बेडकर ने समाज के निम्न वर्ग के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक अधिकारों को मानव अधिकारों से जोड़ा। यह आश्चर्य का विषय है कि आजादी के इतने वर्षों के बाद भी शोषण, अन्याय, छूआछूत, स्त्री–पुरुष असमानता का अस्तित्व बना हुआ है, जिसके कारण मानव अधिकारों का हनन आज भी किया जा रहा है।

वर्तमान युग में संगठित रूप में भारत में नागरिक अधिकार आन्दोलन की शुरूआत 1936 में 'सिविल लिबर्टीज यूनियन' के गठन के साथ हुई। इसके गठन में पंडित जवाहर लाल नेहरू की मुख्य भूमिका थी। स्वतंत्रता के बाद इस यूनियन की सक्रियता कम हो गई। संभवतः यह माना गया कि भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले संविधान के लागू होने के बाद इसकी आवश्यकता नहीं रही।

संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकार घोषणा–पत्र पर भारत ने 1948 में हस्ताक्षर किये थे। तथापि लगभग एक वर्ष पूर्व निर्मित भारत के संविधान में मौलिक अधिकारों के माध्यम से मानवाधिकारों को मान्यता दी जा चुकी थी। संविधान के खण्ड तीन में विधि के समक्ष समानता (अनुच्छेद 14), धर्म मूलवंश, जाति, लिंग अथवा जन्म स्थान के आधार पर विभेद का निषेध (अनुच्छेद 15), अवसर की समानता (अनुच्छेद 16), अस्पृश्यता का अंत (अनुच्छेद 17), वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता (अनुच्छेद 19), अपराधों के लिए दोषसिद्धि के सम्बन्ध में संरक्षण (अनुच्छेद 20), प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता (अनुच्छेद 21), मानव के दुर्व्यापार एवं बलात् श्रम का प्रतिशेध (अनुच्छेद 24), धर्म की स्वतंत्रता (अनुच्छेद 29, 30) इत्यादि अधिकार भारत के नागरिकों (कुछ मामलों में अनागरिकों को भी) को प्रदान किए गए हैं। इतना ही नहीं संविधान में इन अधिकारों की रक्षा के लिए अनुच्छेद 32 एवं अनुच्छेद 226 में सांविधानिक उपचार भी दिए गए है।

केन्द्र सरकार द्वारा इन अधिकारों के संरक्षण तथा संयुक्त राष्ट्र द्वारा घोषित किए जाने वाले मानवाधिकारों सम्बन्धी अभिसमयों, प्रसंविदाओं के सम्यक् पालन हेतु तथा सम्बन्धित उत्तरदायित्वों के सम्यक् निर्वहन हेतु 1993 में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन किया गया।

राष्ट्रीय मानवाधिकर आयोग का गठन मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 के अन्तर्गत किया गया है। आठ सदस्यीय राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का अध्यक्ष किसी पूर्व मुख्य न्यायाधीश को बनाया जाता है तथा 7 अन्य सदस्यों में राष्ट्रीय महिला आयोग के अध्यक्ष, एससी–एसटी आयोग के अध्यक्ष, अल्पसंख्यक आयोग

के अध्यक्ष, सेवानिवृत्त न्यायाधीश तथा दो विशेषज्ञ होते हैं।

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 में सभी राज्यों को मानवाधिकार आयोग के गठन का भी निर्देश दिया गया है। अधिनियम में मानवाधिकार संबंधी मामलों के त्वरित निपटान हेतु प्रत्येक जिला–मुख्यालय पर एक मानवाधिकार न्यायालय की स्थापना तथा अधिनियम की धारा 31 के अनुसार इन न्यायालयों में अभियोजन अधिकारियों की नियुक्ति का भी प्रावधान है।

भारतीय संविधान में सभी मानवाधिकारों को शामिल किया गया है। प्रस्ताव, मौलिक अधिकार, नीति निदेषक तत्वों के द्वारा देश के नागरिकों को वे सभी अधिकार देने के प्रयत्न किए गए हैं जिन्हें संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकार की सार्वभौम घोषणा में स्थान दिया गया है। संविधान की प्रस्तावना में कहा गया है कि 'हम सभी भारतवासी अपने समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समानता, व्यक्ति की गरिमा, राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने का सत्यनिष्ठा के साथ संकल्प लेते हैं।' संविधान के प्रस्ताव के इस मंतव्य को मूल अधिकार तथा नीति निर्देषक खण्ड में स्थान देकर पुष्टीकृत भी किया गया है। किन्तु क्या ये सभी अधिकार वास्वत में देश के नागरिकों को प्रदत्त हैं और यदि ऐसा है तो समय–समय पर मानवाधिकार उल्लंघन के प्रकरण क्यों सामने आते हैं। इसके कई कारण हैं–

प्रथमतः कई मामलों में सरकार द्वारा स्वयं मानवाधिकर विरोधी कानून बनाए गए हैं।

दूसरा समाज द्वारा समय–समय पर इनका उल्लंघन या हनन किया जाता है। यहां समाज से तात्पर्य सरकारी एजेसियां भी हैं।

तीसरा हमारे देश में लागू मानवाधिकर विरोधी प्रथाओं एवं गलत परम्पराओं का अनुकरण भी इसके लिए जिम्मेदार है।

निष्कर्ष–

लास्की ने सही कहा था कि ''अधिकार सामाजिक जीवन की वैसी स्थिति है जिसके बिना कोई भी मनुष्य अपने सर्वोत्तम व्यक्तिव की चाह नहीं कर सकता''। भारत में मानव अधिकार के शासन में समय बीतने के साथ बढ़ोतरी हुई है। जिससे प्रत्येक व्यक्ति को अपने सर्वोच्च व्यक्तित्व के लिए सर्वोत्तम परिवेश का निर्माण हुआ है। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग/राज्य मानव अधिकार आयोग आदि जैसी कार्यकारी, वैधानिक, न्यायपालिका, स्वायत्शासी संगठनों ने एक ऐसे सामाजिक ढ़ांचे के निर्माण की दिशा में सहायता दी है जिसमें सभी के मानव अधिकार सुरक्षित किये जा सके। निःसंदेह कई चुनौतियाँ हैं किन्तु सभी के संगठित प्रयासों से उनका मुकाबला किया जा सकता है। मौजूदा सामाजिक ढ़ांचे में मानव जाति की तरक्की वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकासों से सुनिश्चित नहीं होगी बल्कि आम आदमी के मानव अधिकारों को हासिल करने में हुई सफलता से होगी। हमें विश्वास है कि भारत एक ऐसे सिविल समाज का सपना अवश्य पूरा करेगा जिसमें सभी के अधिकारों के लिए सम्मान तथा सबके लिए खुशी होगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- यादव,डी,एस : भारत में मानव अधिकार, आस्था प्रकाशन, जयपुर, 2012

- शर्मा,जी,एल. : सामाजिक मुद्दे, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2015
- बीसवाल, तमन : मानवअधिकार, जेन्डर एवं पर्यावरण, विकास बुक्स प्राईवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2008
- कटारिया, सुरेन्द्र; मानवाधिकार, सभ्य समाज एवं पुलिस, आर.बी.एस. पब्लिकेशन, जयपुर, 2013
- त्रिपाठी, डी.पी; मानवाधिकार, इलाहाबाद लॉ एजेन्सी पबिलकेशन, इलाहाबाद, 2015
- सिंह, राजबाला; मानवाधिकार एवं महिलाएँ, आविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2006
- सिन्हा, एस.पी.; ह्यूमन राइट्स फिलासफिकली, इण्डियन जर्नल ऑफ इण्टरनेशनल लॉ, वॉल्यूम 18, 2010
- पराशर, अनिल कुमार : मानव अधिकारः नई दिशाऐं, वार्षिक अंक–9, 2012
- पाण्डेय, जे.एन; भारत का संविधान, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद, 1994
- रैना, विनोद; भारत में सामाजिक आंदोलन, 2004
- सुब्रह्मण्यम, एस.; पुलिस एवं मानवाधिकार, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017
- तारकुंड, वी.एम.; मानवाधिकारों का दर्शन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995
- जोशी, आर.पी. : मानव अधिकार एवं कर्तव्य, अभिनव प्रकाशन, अजमैर, 2017
- अंसारी, एम.ए.; महिला एवं मानवाधिकार, ज्योति प्रकाशन, जयपुर, 2003
- अग्रवाल, एच.ओ. : मानव अधिकार, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद, 2014